

सुधाधर्म संसाधनी धर्मशाला, सुधाताप निर्नाशिनी मेघमाला ।
 महामोह विध्वंसिनी मोक्षदानी, नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥२॥
 अखैवृक्षशाखा व्यतीताभिलाषा, कथा संस्कृता प्राकृता देशभाषा ।
 चिदानंद-भूपाल की राजधानी, नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥३॥
 समाधानरूपा अनूपा अक्षुद्रा, अनेकान्तधा स्याद्वादांक मुद्रा ।
 त्रिधा सप्तधा द्वादशाङ्गी बखानी, नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥४॥
 अकोपा अमाना अदंभा अलोभा, श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञान शोभा ।
 महापावनी भावना भव्य मानी, नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥५॥
 अतीता अजीता सदा निर्विकारा, विषै वाटिका खंडिनी खड्ग धारा ।
 पुरापाप विक्षेप कर्ता कृपाणी, नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥६॥
 अगाधा अबाधा निरध्रा निराशा, अनन्ता अनादीश्वरी कर्मनाशा ।
 निशंका निरंका चिदंका भवानी, नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥७॥
 अशोका मुदेका विवेका विधानी, जगज्जन्तुमित्रा विचित्रावसानी ।
 समस्तावलोका निरस्ता निदानी, नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥८॥

जे आगम रुचिधरैं, प्रतीति मन माहिं आनहिं ।
 अवधारहिंगे पुरुष, समर्थ पद अर्थ आनहिं ॥
 जे हित हेतु 'बनारसी', देहिं धर्म उपदेश ।
 ते सब पावहिं परम सुख, तज संसार कलेश ॥

(१६)

भ्रात जिनवाणी-सम नहिं आन, जान श्रुतपंचमि पर्व महान ॥टेक॥
 एकान्तों का नहीं ठिकाना, स्याद्वाद का लखा निशाना ॥
 मिटता भव-भव का अज्ञान, जान श्रुतपंचमि पर्व महान ॥१॥
 केवलज्ञानी की यह वाणी, खिरे निरक्षर तदि समझानी ।
 सुर-नर तिर्यंच सुनते आन, जान श्रुतपंचमि पर्व महान ॥२॥
 गणधर हृदय विराजी माता, ज्ञानस्वभाव सहज झलकाता ।
 सुनत चिन्तत हो भेद-ज्ञान, जान श्रुतपंचमि पर्व महान ॥३॥

भविजन प्रीति सहित चित धारे, रवि-शशि-सम तम केसरिहारे।
उर घट प्रकटे पूरन आन, जान श्रुत पंचमि पर्व महान॥४॥
मोक्षदायिका है जिनमाता, तुम पूजक सम्यक् निधि पाता।
‘नंद’ भी अपने आश्रित जान, जान श्रुतपंचमि पर्व महान॥५॥

गुरु भक्ति

(१)

ऐसे साधु सुगुरु कब मिलि हैं॥टेक॥
आप तरैं अरु पर को तरैं, निष्पृही निर्मल हैं॥१॥
तिल तुष मात्र संग नहिं जिनके, ज्ञान-ध्यान गुण बल हैं॥२॥
शांत दिगम्बर मुद्रा जिनकी, मन्दर तुल्य अचल हैं॥३॥
‘भागचन्द’ तिनको नित चाहें, ज्यों कमलनि को अलि हैं॥४॥

(२)

धन-धन जैनी साधु जगत के, तत्त्वज्ञान विलासी हो॥टेक॥
दर्शन बोधमई निज मूरति जिनको अपनी भासी हो।
त्यागी अन्य समस्त वस्तु में अहंबुद्धि दुःखदासी हो॥१॥
जिन अशुभोपयोग की परिणति सत्तासहित विनाशी हो।
होय कदाच शुभोपयोग तो तहँ भी रहत उदासी हो॥२॥
छेदत जे अनादि दुःखदायक दुविधि बंध की फाँसी हो।
मोह क्षोभ रहित जिन परिणति विमल मयंक विलासी हो॥३॥
विषय चाह दव दाह बुझावन साम्य सुधारस रासी हो।
‘भागचन्द’ पद ज्ञानानन्दी साधक सदा हुलासी हो॥४॥

(३)

परम गुरु बरसत ज्ञान झरी।
हरषि-हरषि बहु गरजि-गरजि के मिथ्या तपन हरी॥टेक॥
सरधा भूमि सुहावनि लागी संशय बेल हरी।
भविजन मन सरवर भरि उमड़े समुझि पवन सियरी॥१॥